ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 182-183

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

गांधी का कर्मवाद

मीना कुमारी
सहायक प्रोफेसर– संस्कृत विभाग, एस.एस.एल.एन.टी.महिला महाविद्यालय,धनबाद (झारखण्ड), भारत

Received- 07.08.2020, Revised- 10.08.2020, Accepted - 13.08.2020 E-mail: - dr.ramanyadav@gmail.com

सारांश : *गांधी जी गीता के परम भक्त थे । इसलिए वे गीता के आदेश को सर्वोपरि मानते थे । गीता निश्काम भाव से कर्म करने का आदेश देती है । गांधी ने स्वयं कहा है कि यदि उत्तम कार्य के पीछे भी स्वार्थ भरा हो तो वह नैतिक नहीं कहा जा सकता।[1]निश्काम भावना से किया गया कर्म ही नैतिक कर्म कहला सेकता है ।*

कुंजीभूत शब्द– परम भक्त, आदेश, सर्वोपरि, निश्काम भाव, उत्तम कार्य, स्वार्थ, नैतिक, भावना, मध्यविन्दु ।

गांधी जी फलत्याग और अनासक्ति को गीता का मध्यविन्दु मानते थे, जिसके द्वारा कर्मरत हुए भी कर्म के दोशों से मुक्त रहा जा सकता है । परन्तु निश्कामता केवल कर्मफल त्याग से नहीं आती हैं और न मात्र बुद्धि के प्रयोग से । इसके लिए ह्रदय–मन्थन करना होता है।[2] अर्थात भक्ति और श्रद्धा पर आधारित ज्ञान से ही निश्कामता सिद्ध हो सकती हैं । गांधी के अनुसार कर्मफल त्याग ''परिणाम के संबंध में लापरवाही नहीं है। इससे परिणाम और साधन का विचार तथा उसका ज्ञान अत्यावश्यक है।"[3] फलत्याग का यह भी अर्थ नहीं है कि फलत्याग से फल मिलता ही नहीं । फलत्याग का अर्थ हैं फल के सम्बन्ध में आसक्ति का अभाव । वास्तव में फलत्यागी को अनन्त फल मिलता है । परन्तु आसक्ति के कारण व्यक्ति – भ्रष्ट हो जाता हैं तथा अनेक प्रकार के विकारों से ग्रस्त हो जाता है। अतः फलासक्ति के इस कटु परिणाम के कारण गीता अनासक्ति या कर्मफल त्याग की शिक्षा देती है । "अनासक्ति ही वास्तविक रूप से नैतिक और अनैतिक कर्म का निर्धारक है । यदि कोई कर्म आसक्ति के बिना हो ही नही सकता तो वह नैतिक दृष्टि से त्याज्य है ।[4] गांधी का यह विश्वास है कि अनासक्ति और निश्कामता सिद्ध होने से सत्य और अहिंसा का पालन करना भी आसानहो जाता है क्योकि फलासक्ति के कारण ही व्यक्ति असत्य और हिंसा का सहारा लेता है ।

गांधी जी अपने कर्मवाद के विवेचन में साधन की महत्ता पर विशेष बल देते है । यद्यपि उन्होने साध्य की उपेक्षा नहीं किया है । किन्तु उनका मानना है कि साधन के शुद्ध होने पर साध्य स्वतः शुद्ध हो जाता है । इस तथ्य के विवेचना में भी उन्होने गीता का ही सहारा लिया है । उनके अनुसार साधन साध्य विचार का बीज–तत्व गीता का निश्काम कर्म है । जिससे फल के बदले कर्त्तव्य पर बल दिया जाता है । साधन और साध्य की सामान्य और नैतिक–दोनो भूमिकायें है । नैतिक भूमिका मे साध्य किसी क्रिया के प्रयोजन, लक्ष्य और परिणाम का सूचक है । साधन वह क्रिया है जिसके द्वारा इच्छित लक्ष्य और परिणाम को सिद्ध करने का प्रयत्न किया जाता है । परन्तु नीतिशास्त्र में साध्य के स्वरूप के सम्बन्ध मे मतैक्य नहीं है । टी.एच. ग्रीन, डी आर्की, मैकेन्जी, म्यूरह्वेड, वटलर और काण्ट का अर्थ प्ररेणा या प्रेरक तत्व से लेते है । परन्तु मिल,बेन्थम और चार्वाक साध्य के अर्थ कार्यो के परिणाम ही मानते है । ''गांधी की योजना में साध्य के अन्दर लक्ष्य (आत्मनिष्ठ तत्व) और परिणाम (वस्तुनिष्ठ तत्व) दोनो का समावेष है।"[5] इन दोनो का गांधी सत्य मानते है क्योंकि परमतत्त्व के रूप में सत्य के अन्तर्गत आन्तरिक और बाहय दोनो प्रकार की सत्ता आ जाती है । अतः गांधी के अनुसार '' सत्य साध्य है ।"[6] साधन विशेष रूप से क्रिया सूचक पद है । जिससे साध्य को प्राप्त किया जाता है। परन्तु सभी क्रियायें समान नहीं होती। कुछ क्रियायें ऐसी हैं जिनमें शक्ति–प्रयोग, कत्ल, शोषण, प्रतिशोध और परपीड़न का समावेश होती है, जिसे गांधी हिंसक कार्य की संज्ञा देते है तथा कुछ क्रियायें प्रेम, करूणा और सहयोग की सूचक हैं जिसे अहिंसक कार्य की संज्ञा दी जाती है । इस दोनो प्रकार के साधनो से कार्य सिद्ध करने का प्रयत्न किया जा सकता है । नीतिशास्त्र में कुछ विचारक जैसे कौटिल्य, मेकियावेली, हिटलर, स्टालिन, लेनिन, माओ, दब्रे, ग्वेवारा इत्यादि है जो साध्य पर ही विशेष बल देते है । साधन में चाहे वह हिंसक हो या अहिंसक, उनका कोई आग्रह नहीं है । मुख्य बात कार्य की निपुणता है । इन विचारकों के अनुसार साध्य की पवित्रता साधन को भी पवित्र बना देती है । गांधी को यह विचार मान्य नहीं है । ''इनके अनुसार साध नही सबकुछ है ।"[7] अतः सापेक्ष सत्य अथवा अहिंसा के आधार पर ही साध्य को सिद्ध किया जा सकता है । साधन की पवित्रता ही साध्य को पवित्र बना सकती है ।

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

गांधी के अनुसार " अशुद्ध साधन का परिणाम अशुद्ध होता है । असत्य के आधार पर कोई सत्य तक पहुँच नहीं सकता, सत्य आचरण के आधार पर ही सत्य तक पहुंचा जा सकता है ।"[8] गांधी जी पुनः कहते है कि "कोई यह कहते है कि साधन तो साधन ही है, मैं कहुँगा कि साधन सबकुछ है । जैसा साधन होगा,वैसा ही साध्य होगा । साधन और साध्य के बीच में कोई लक्ष्मण रेखा नहीं है । फिर भी ईश्वर ने हमें साधन पर ही नियंत्रण दिया है, वह भी सीमित मात्रा में । साध्य पर तरो हमारा अधिकार ही नहीं है । लक्ष्य की प्राप्ति ठीक उसी अनुपात में होती है जिस अनुपात में हमारा साधन होता है । यह ऐसी प्रतिज्ञप्ति है जिसका कोई अपवाद नहीं है । इसका समर्थन गीता के "कर्मण्येवाधिकास्ते मा फलेषु कदाचनं " से भी होता है । अर्थात हमें कर्म करने का ही अधिकार है, फल पर हमारा अधिकार नहीं ।[9]

वास्तव में "हम सर्वशक्तिमान की संकल्प वीणा के तार हैं । हम आगे और पीछे ले जाने वाले कार्यो से अनभिज्ञ हैं । अतः हमें केवल साधन के ज्ञान से ही सन्तुष्ट रहना चहिए और हम शुद्ध हैं तो हम निर्भयता पुर्वक साध्य का ख्याल छोड सकते हैं ।"[10] साध्य के ज्ञान रहने पर भी यदि हम साधन से अनभिज्ञ हैं,तो साध्य की प्राप्ति नहीं कर सकते। अतः गांधी कहते है कि "इसलिए मैं अपना सम्बन्ध मुख्यतः साधन के संरक्षण और उनके प्रगतिशील व्यवहार से ही रखता हूँ । मैं जानता हूँ कि यदि हम उनका ख्याल करेंगे,तो लक्ष्य की सिद्धि निश्चित है । मैं यह भी अनुभव करता हूँ कि हमारी लक्ष्य की दिशा में प्रगति साधन की पवित्रता के अनुपात में ही होगी ।"[11]

गांधी जी का मानना है कि असत् से सत् का उत्पन्न होना असंभव है । अतः गलत साधन से उत्तम साध्य की कल्पना व्यर्थ है । वे कहते है कि " मैं कितनी ही योग्य प्रेरणा के प्रति सहानुभूति क्यों न रखूँ और इसकी प्रशंसा क्यों न करूँ, लेकिन हिंसक समाज का विरोधी हूँ चाहे उससे उत्तम से उत्तम साध्य क्यों न सिद्ध हो । अनुभव मुझे अटूट विश्वास दिलाता है कि स्थायी शुभ असत्य और हिंसा से कभी भी उत्पन्न नहीं हो सकता ।"[12] यद्यपि "तर्क के लिए यह कहा जा सकता है कि साध्य की प्राप्ति का यह आवश्यकता से अधिक लम्बी राह है, परन्तु गांधी के लिए यह सब से छोटी राह है । वस्तुतः साध्य की सफलता और विफलता हमारे हाथ में नहीं है । अतः हमारे लिए उत्तम कार्य करना ही वांछनीय है । अन्त में वही होगा जो ईश्वर चाहेगा ।[13]

*****

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. "The societies spreading ethical religion or religious ethics believe in religion through morality"- Gandhi's M.K.Ethical Religion, Chapter V Compiled in the selected works of Mahatma Gandhi(ed.)Shoiman Narayan,(Ahmedabad, Novajivan Publishing House,1968), Vol.-IV P.20.
2. "Considered intellectually and scientifically religion and morality are united and should be so united" Ibid P.21.
3. सुमन सोमनाथ,(सम्पा.),नीति धर्म दर्षन,(सेवापुरी वाराणसी,गांधी साहित्य प्रकाषन,1968) पृ0 28
4. उपरिक्त पृ0 28ण
5. Narayan,Shriman,(ed.) The selected works of Mahatma Gnadhi Vol.IV P. 8.
6. Ibid P.9 .
7. Ibid P.19.
8. Ibid P.17.
9. Ibid P.17.
10. " We should be moral because being moral is following rules designed to over rule self in terest whenever it is in the interest of every one a like that everyone should set aside his interest"- Bair,Kurt,The Moral Point of view,(New yourk, Cornel University Press,1964) P.314.
11. Narayan,Shriman, The selected works of Mahatma Gnadhi Vol.IV P. 22.
12. "The founders of the religious have also ex plained that morality is the basis of religion if a foundation is removed, the superstructure falls to the ground, similarly if morality is destroyed, religion is built on it comes gash ing down." Ibid. P.22-23.
13. Baier,Kurt The Moral Point of view. P.314.
14. उपरिवत – पृ0 40.
15. उपरिवत – पृ041.
16. उपरिवत – पृ041.

PIF/6.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*